के प्रति दयामय; **कुर्वन् अपि**=कर्म करता हुआ भी; **न**=नहीं; **लिप्यते**=बँधता।

अनुवाद

जो शुद्ध अन्तःकरण, आत्मसंयमी तथा जितेन्द्रिय पुरुष भक्तिभाव से कर्म करता है, वह सब प्राणियों को प्रिय होता है उसे भी सब प्राणी प्रिय होते हैं। नित्य कर्म करते हुए भी वह कभी नहीं बँधता।।७।।

तात्पर्य

कृष्णभावना के साधन से मुक्तिपथ का पथिक प्राणीमात्र का अतिशय प्रेमपात्र है और उसे भी प्राणीमात्र प्रिय होता है। इसका कारण उसकी कृष्णभावना है। ऐसा व्यक्ति किसी भी प्राणी को श्रीकृष्ण से सम्बन्धरहित नहीं समझ सकता, उसी भाँति जैसे वृक्ष के पत्ते-शाखा आदि वृक्ष से अलग नहीं होते। वह भलीभाँति जानता है कि तरुमूल को जल द्वारा सींचने से जल सम्पूर्ण पत्तों और शाखाओं में वितरित हो जायगा, जैसे भोजन द्वारा उदरपर्ति करने से सम्पूर्ण शरीर में शक्ति का संचार हो जाता है। कृष्णभावनाभावित कर्म करने वाला प्राणीमात्र की सेवा में निष्ठ रहता है, इसलिए सर्वप्रिय हो जाता है। वह शुद्धमति भी है, क्योंकि उसके कार्य से सभी का परितोषण होता है। शुद्धमति के प्रभाव से उसका चित्त पूर्णतया संयमित रहता है, जिसके परिणाम में इन्द्रियाँ भी संयमित हो जाती हैं। उसका चित्त सदा श्रीकृष्ण पर केन्द्रित रहता है। अतः उसके लिए श्रीकृष्ण से विचलित होने की कोई सम्भावना नहीं और न ही उसकी इन्द्रियाँ भगवत्सेवा के अतिरिक्त अन्य विषय में प्रवृत्त हो सकती हैं। श्रीकृष्ण से सम्बन्धरहित विषयों का श्रवण उसे अप्रिय होता है; वह ऐसा कोई भी पदार्थ खाना नहीं चाहता, जो श्रीकृष्ण को अर्पित न किया गया हो। श्रीकृष्ण के सम्बन्ध बिना वह कहीं जाना भी नहीं चाहता। इस प्रकार उसकी इन्द्रियाँ वश में रहती हैं। ऐसा जितेन्द्रिय पुरुष किसी का अपराध नहीं कर सकता। इस पर यह जिज्ञासा हो सकती है कि तब अर्जुन ने (युद्ध में) शत्रु पर प्रत्याघात क्यों किया? क्या वह कृष्णभावनाभावित नहीं था? वस्तुतः अर्जुन तो केवल बाह्यरूप से आक्रमण कर रहा था, क्योंकि जैसा द्वितीय अध्याय में कहा जा चुका है, आत्मा की अवध्यता के कारण युद्धस्थल में इकट्ठे हुए सब योद्धाओं का अपना निजी स्वरूप सदा बना रहेगा। अतएव आत्मा की दृष्टि से तो कुरुक्षेत्र की युद्धभूमि में किसी की भी मृत्यु नहीं हुई। श्रीकृष्ण के आज्ञानुसार, (जो वहाँ स्वयं विराजमान थे) केवल उनके देहरूपी परिधान को बदला गया। कुरुक्षेत्र में युद्ध करते हुए भी अर्जुन वास्तव में युद्ध नहीं कर रहा था। उसने तो बस पूर्णतया कृष्णभावनाभावित होकर श्रीकृष्ण की आज्ञा का केवल पालन किया। ऐसे पुरुष को कभी कर्मबन्धन नहीं होता।

15/5

नैव किंचित्करोमीति युक्तो मन्येत तत्त्ववित्।
पश्यञ्शृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्नश्नन्गच्छन्स्वपन्श्वसन्।।८।।
प्रलपन्विसृजन्गृह्णन्नुन्मिषन्निमिषन्नपि।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु वर्तन्त इति धारयन्।।९।।